वे गांधी का नाम तो लेते हैं, मगर मंदिर गोडसे का बनाते हैं

गोडसे को महिमामंडित करके किसी विचार को नहीं, सिर्फ एक ऐसे शख्स को स्थापित कर रहे हैं, जिसने भारत में राजनीतिक हत्याओं की शुरुआत की थी....

रामस्वरूप मंत्री

नाथूराम गोडसे पर फिर से बहस हो रही है। पहले फिल्म अभिनेता कमल हासन ने उसे आजाद भारत का पहला आतंकवादी बताया, फिर प्रज्ञा ठाकुर ने नाथूराम गोडसे को देशभक्त बताया। उन्होंने कहा कि गोडसे कोआतंकी कहने वालों को अपने गिरेबां में झांकना चाहिए। यह सब करते हुए ये लोग कुछ ऐसी मुद्रा अपनाए हुए हैं, जैसे गोडसे पर बात करना कोई विद्रोही, क्रांतिकारी काम हो।

यह बहस नई नहीं है, लेकिन जो नया है वो यह कि पिछले कुछ दिनों से नाथूराम गोडसे के नाम का जयकारा खुले तौर पर लगाया जाने लगा है। सोशल मीडिया पर प्रतिक्रिया देते हुए भी और असल जिंदगी में बात करते हुए भी लेकिन ऐसा करना हमारे लिए कितना हितकर है?

सच्चाई यह है कि 30 जनवरी 1948 को महात्मा गांधी की हत्या के बाद से ही गोडसे कभी चर्चा से बाहर नहीं हुआ। उसके पक्ष में किताब और लेख लिखे गए। मराठी में %मी नाथूराम गोडसे बोलतोय% नामक नाटक लिखा और खेला गया। कई फिल्मों में गोडसे के चरित्र को तेजस्वी रूप में पेश किया गया।

गोडसे के बारे में बात करना या लिखना या उसके नाम पर चुनाव प्रचार करना, कुछ भी भारत में प्रतिबंधित नहीं है। इन संगठनों का कहना है कि कांग्रेस ने हमेशा नाथूराम को एक खलनायक के रूप में पेश किया, लेकिन वे गोडसे को गांधी के बरक्स नए नायक के रूप में पेश करना चाहते हैं। लेकिन इन संगठनों को जरा भी अहसास नहीं है कि गोडसे को महिमामंडित करके वे किसी विचार को नहीं, सिर्फ एक ऐसे शख्स को स्थापित कर रहे हैं, जिसने भारत में राजनीतिक हत्याओं की शुरुआत की थी।

गांधी की हत्या इसलिए हुई कि धर्म का नाम लेने वाली सांप्रदायिकता उनसे डरती थी। भारत-माता की जड़मूर्ति बनाने वाली, राष्ट्रवाद को सांप्रदायिक पहचान के आधार पर बांटने वाली विचारधारा उनसे परेशान रहती थी। गांधी धर्म के कर्मकांड की अवहेलना करते हुए उसका मर्म खोज लाते थे और कुछ इस तरह कि धर्म भी सध जाता था, मर्म भी सध जाता था और वह राजनीतिभी सध जाती थी जो एक नया देश और नया समाज बना सकती थी।

गांधी अपनी धार्मिकता को लेकर हमेशा निष्कंप, अपने हिंदुत्व को लेकर हमेशा असंदिग्ध रहे। राम और गीता जैसे प्रतीकों को उन्होंने सांप्रदायिक ताकतों की जकड़ से बचाए रखा, उन्हें नए और मानवीय अर्थ दिए। उनका भगवान छुआछूत में भरोसा नहीं करता था, बल्कि इस पर भरोसा करने वालों को भूकंप की शक्ल में दंड देता था। इस धार्मिकता के आगे धर्म के नाम पर पलने वाली और राष्ट्र के नाम पर दंगे करने वाली सांप्रदायिकता खुद को कुंठित पाती थी। गोडसे इस कुंठा का प्रतीक पुरुष था जिसने धर्मनिरपेक्ष नेहरू या सांप्रदायिक जिन्ना को नहीं, धार्मिक गांधी को गोली मारी।

लेकिन मरने के बाद भी गांधी मरे नहीं। आमतौर पर यह एक जड़ वाक्य है जो हर विचार के समर्थन में बोला जाता है, लेकिन ध्यान से देखें तो आज की दुनिया सबसे ज़्यादा तत्व गांधी से ग्रहण कर रही है। वे जितने पारंपरिक थे, उससे ज़्यादा उत्तर आधुनिक साबित हो रहे हैं। वे हमारी सदी के तर्कवाद के विरुद्ध आस्था का स्वर रचते हैं। हमारे समय के सबसे बड़े मुद्दे जैसे उनकी विचारधारा की कोख में पल कर निकले हैं। मानवाधिकार का मुद्दा हो, सांस्कृतिक बहुलता का प्रश्न हो या फिर पर्यावरण का- यह सब जैसे गांधी के चरखे से, उनके बनाए सूत से बंधे हुए हैं।

गांधी को याद करते हुए यह बात भुलाई नहीं जा सकती कि दरअसल यह जीवन-दृष्टि है- जीवन को देखने का नज़रिया- जो किसी को गोडसे और किसी को गांधी बनाता है। जीवन में फांक तब पैदा होती है, जब हम गांधी की तरह होना चाहते हैं, लेकिन गोडसे की तरह हरकत करते हैं।

भारतीय समाज में यह विडंबना आज कुछ ज़्यादा ही विकट हो गई है। गांधी से हर कोई श्रद्धा रखता है, लेकिन गांधी के मूल्यों की परवाह नहीं करता। दरअसल, गांधी भी कई तरह के हैं। कुछ आसान गांधी हैं, कुछ मुश्किल गांधी हैं, कुछ बेहद मुश्किल गांधी हैं और कुछ लगभग असंभव लगते गांधी हैं। आसान गांधी के अनुसरण का एक रास्ता फिल्म 'लगे रहो मुन्नाभाई' ने दिखाया था- यह अहिंसक प्रतिरोध का रास्ता है।

इस फिल्म के बाद फूल देकर विरोध करने का चलन बढ़ा। मोमबत्ती जलाकर विरोध जताना इसी अहिंसक प्रतिरोध का एक और रूप है। राजनीतिक दलों के उपवास या धरने को भी इसी श्रेणी में रखा जा सकता है, हालांकि उन्होंने गांधी के उपवास में आत्मशुद्धि का जोतत्व था, उसे भुला दिया है।

एक और आसान गांधी हैं, जिनका वास्ता स्वच्छता, सहिष्णुता जैसे मूल्यों से है। कई एनजीओ अपने आचरण में तो नहीं, लेकिन

सिद्धांत में इस गांधीवाद के रास्ते पर चलते दिखाई पड़ते हैं। हालांकि, गांधी के सदाचार के कठोर नियम उनकी व्यावहारिक समाजसेवा के रास्ते में बाधक बनते जाते हैं, लेकिन ये सजावटी या दिखावटी गांधी हैं। असली गांधी धीरे-धीरे चुनौतियां कड़ी करते जाते हैं। सर्वधर्म समभाव की उनकी शर्त इस देश में बहुसंख्यकों की राजनीति करने वाली वैचारिकी के गले नहीं उतरती।

कई बार लगता है कि इसी सर्वधर्म समभाव की वजह से उनकी हत्या भी हुई। दिलचस्प यह है कि सर्वधर्म समभाव का यह बीज गांधी कहीं बाहर से आयात नहीं करते, भारतीयता की मिट्टी से ही खोज निकालते हैं। वे सच्चे हिंदू हैं, बल्कि इतने सच्चे कि हिंदुत्व के भीतर जो गंदगी है, उसको भी दूर करने को कटिबद्ध दिखते हैं।

पहले अछूतोद्धार का आंदोलन चलाते हैं और फिर यह समझते हैं कि उद्धार की ज़रूरत अछूतों को नहीं, उन वर्गों को है जिन्होंने एक तबके को अछूत बना रखा है। यह लगता है कि गांधी कुछ देर और जीते तो शायद इस सड़े-गले हिंदुत्व की कुछ और सर्जरी कर डालते, धीरे-धीरे गांधी कुछ और कड़े होते जाते हैं। वे मनुष्यता की शर्तें निर्धारित करने लगते हैं- वे चाहते हैं कि हर आदमी अपनी ज़रूरत भर ले, उससे ज़्यादा नहीं।

वे युवराजों को झोपड़ों में रहने की सलाह देते हैं, डॉक्टरों और वकीलों को उपभोग और झगड़े की जीवन शैली को बढ़ावा देने के लिए दुत्कारते हैं, वे देश और धर्म की बनी-बनाई सरणियों के पार जाते दिखते हैं, वे राष्ट्रवाद के उद्धत आग्रह को आईना दिखाते हैं, वे अपने विख्यात गोप्रेम के बावजूद जबरन गोकशी रोकने के ख़िलाफ़ नज़र आते हैं, वे अपने बुने कपड़ों, अपने उगाए अन्न और अपने बनाए औजारों पर इतना ज़ोर देते हैं कि उनका ग्राम स्वराज लगभग असंभव जान पड़ता है- आज के दुनियादार लोगों के लिए तो वे किसी और ज़माने के पीछे छूटे हुए नेता भर हैं, जिनकी मूर्ति पर माल्यार्पण कर देना, जिनकी तस्वीर दफ़्तर में टांग लेना काफ़ी है।

लेकिन यह अव्यावहारिक गांधी भी मौजूदा राजनीतिक प्रतिष्ठान को डराता है। गांधी के आईने में उसकी अपनी वैचारिकी के विद्रूप दिखाई पड़ते हैं। गांधी के सर्वधर्म समभाव के आगे उसकी उद्धत बहुसंख्यक राजनीति मंद जान पड़ती है, गांधी के स्वदेशी के आगे उसके स्वदेशी का खोखलापन उजागर हो जाता है, गांधी जो देश बनाना चाहते हैं, उसके आगे इसका राष्ट्रवाद संकुचित और सीमित दिखाई पड़ता है।

गांधी के गोप्रेम के आगे इनकी गोरक्षा आपराधिक और हिंसक नज़र आती है। और तो और, गांधी जिस राम के उपासक हैं, उसके आगे बीजेपी के जयश्री राम बहुत सारे लोगों को पराये लगने लगते हैं।

लेकिन इस गांधी को वे उस तरह नहीं मार सकते, जिस तरह गोडसे ने मारने की कोशिश की। इसलिए वे गांधी का नाम तो लेते हैं, मगर मंदिर गोडसे का बनाते हैं। गांधी की या किसी भी निर्दोष व्यक्ति की हत्या को अगर न्यायोचित ठहराया गया तो इससे भारतीय लोकतंत्र पराजित होगा और देश के घोषित तालिबानीकरण की शुरुआत हो जाएगी। बेहतर होगा कि ये संगठन समय रहते इस बात को समझ लें, क्योंकि बाद में उन्हें पछताने का भी समय नहीं मिले।

विविध/ हाइपरलूप में चलती बुलेट ट्रेन

चित्र टॉम लाफ़टीन जॉनसन का है जो अमेरिका में एक उद्योगपति एक इंजीनियरिंग कॉलेज में प्रोफेसर के साथ साथ अमेरिका के बड़े शहर क्लीवलैंड के चार बार मेयर भी थे।

एक दिन ये अपने घर के गैराज में कुछ प्रयोग कर रहे थे उनके सामने एक बिजली का छोटा सा मोटर था।

सभी जानते हैं कि बिजली के मोटर में बीच में एक कोर होता है और चारों तरफ एक आर्मेचर होता है आर्मेचर में बिजली का प्रवाह डाला जाता है जिससे एक मैग्नेटिक फील्ड बनती है और उसमें मैटिक फील्ड की वजह से बीच में जो कोर होता है वह तेजी से घूमने लगता है और इसी के उल्टे सिद्धांत पर बिजली का जनरेटर काम करता है।

तुरंत इनके विचार उनके मन में एक क्रांतिकारी विचार आया उन्होंने सोचा जब आर्मेचर गोल है तब कोर उसके बीच में घूम रहा है तो यदि आर्मेचर को लंबवत रूप में फैला दिया जाए तो क्या होता है।

फिर उन्होंने जब प्रयोग किया तब यह देखकर हैरान रह गए की रॉकेट की गति से कोर एक तरफ से दूसरी तरफ भागा।

उसके बाद इन्होंने 1906 में अमेरिका के पेटेंट कार्यालय में एक ऐसे ट्रांसपोर्ट सिस्टम का पेटेंट हासिल कर लिया जिसे दुनिया आज मैगलेव यानी मैग्नेटिक लेविगेशन के नाम से जानती है।

इन्होंने यह विचार दिया कि बगैर पहिए के भी ट्रेन को चलाया जा सकता है यानी मैग्नेटिक लेविगेशन के द्वारा रेल की

पटरीओं में एक मैग्नेटिक फील्ड होगा यानी बिजली के मोटर में जो काम आर्मेचर करती है वह काम रेल की पटरीया करेंगी और बिजली के मोटर में जो काम कोर करता है वह काम खुद ट्रेन करेगा लेकिन इस ट्रेन में पहिए नहीं होंगे यह रेल की पटरी यानी आर्मेचर से कुछ मिली मीटर ऊपर उठकर मैग्नेटिक फील्ड पर दौड़ेगा।

आज मैग्लेव ट्रेन जर्मनी में और चीन में चल रही है जिन की गति 900 किलोमीटर से लेकर 1100 किलोमीटर प्रति घंटा होती है।

लेकिन इस मैग्लेव ट्रेन की सबसे नुकसान वाली बात यह है कि इन्हें बहुत ज्यादा बिजली चाहिए यानी यह बिजली का बहुत ज्यादा खपत करती हैं इसीलिए यह आर्थिक रूप से कई देशों द्वारा नकार दी गई हैं।

फिर टेस्ला कंपनी के मालिक एलन मस्क ने इस पर रिसर्च किया वह यह जानना चाहते हैं थे कि मैग्नेटिक लेविगेशन यानी मैगलेव ट्रेन में इतनी ज्यादा बिजली क्यों लगती है। तब उन्हें पता चला कि हमारे वायुमंडल में जो हवा होती है उसके फ्रिक्शन की वजह से मैग्लेव ट्रांसपोर्टेशन सिस्टम को बहुत ज्यादा बिजली चाहिए क्योंकि 90 प्रतिशत ऊर्जा वायुमंडल के फ्रिक्शन की वजह से बर्बाद हो जाती है।

फिर एलन मस्क के दिमाग में और भी ज्यादा क्रांतिकारी विचार आया कि यदि एक ऐसा ट्यूब बना दिया जाए जिसमें वैक्यूम के द्वारा पूरी हवा निकाल दिया जाए और उसमें भी यही मैग्नेटिक आर्मेचर और कोर का सिद्धांत हो तब क्या होता है

उसके बाद उन्होंने अमेरिका के नवादा के रेगिस्तान में एक हाइपरलूप बनाकर इसका प्रयोग किया फिर यह देखकर वैज्ञानिक चौक गए कि बेहद कम बिजली में हाइपरलूप चलाया जा सकता है क्योंकि रूप में से हवा निकाल देने से पॉड को फ्रिक्शन का सामना नहीं करना पड़ता इसीलिए बेहद तेज स्पीड में यानी बुलेट की स्पीड में पॉड जिसमें यात्री बैठे होते हैं वह हाइपरलूप में एक जगह से दूसरी जगह चला जाता है।

हाइपरलूप का पेटेंट भी हो गया है। अमेरिका के कई शहरों में इसकी मंजूरी दे दिया है दुबई में भी लग रहा है भारत सरकार भी इस पर विचार कर रही है क्योंकि इसमें बहुत कम बिजली लगती है और इसे बनाने में किसी मेट्रो के बनाने की अपेक्षा बहुत कम खर्चा आता है।